शिष्यता के मार्ग पर (9:1-9; 22:4-11; 26:9-19)

प्रस्तुत और अगले पाठ में हम ''इतिहास में मनपरिवर्तन की सुप्रसिद्ध कहानी'' और ''मानवीय इतिहास की अति महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक'' अर्थात तरसुस के रहने वाले बदनाम शाऊल[1] के मनपरिवर्तन का अध्ययन करेंगे। प्रेरितों के काम के अध्याय तीन शाऊल के मनपरिवर्तन के बारे में बताते हैं:[2] अध्याय 9 में उसके मनपरिवर्तन और अध्याय 22 और 26 में इस प्रेरित द्वारा इस विषय में औरों को बताने के बारे में वर्णन किया गया है।[3] पूरी कहानी को समझने के लिए, हम इन तीनों वृत्तांतों को मिला लेंगे।[4]

अडिग सोच (9:1, 2; 22:4, 5; 26:9-12)

शाऊल में होने वाले परिवर्तन की सराहना करने के लिए, हमें मनपरितर्वन से पहले के उसके जीवन के बारे में कुछ जानना चाहिए। उसके लेखों और प्रवचनों से छांटकर जो व्यक्तिगत हवाले हम इकट्ठे करते हैं, उनसे एक कट्टर युवक का चित्र प्रस्तुत होता है जो अपने इस विचार पर अडिग है कि सभी मसीहियों[5] का नाश हो जाना चाहिए और पृथ्वी से यीशु का नाम मिट जाना चाहिए।

शाऊल का जन्म तरसुस में यहूदी माता-पिता के घर किलकिया की एक रोमी कॉलोनी में हुआ जो ''कोई असाधारण नगर नहीं था।''[6] उसका परिवार यहूदा के छोटे से गोत्र बिन्यामीन से था (फिलिप्पियों 3:5); उसके माता-पिता ने अपने गोत्र के सर्वाधिक प्रसिद्ध प्रतिनिधि, राजा शाऊल[7] के नाम पर उसका नाम रखा। तरसुस के शाऊल को अपने परिवार, सम्पत्ति, रोमी नागरिकता और यहूदी विश्वास से अत्यधिक प्रेम मीरास में मिला था।[8] उसका पालन-पोषण यहूदी धर्म के ''सबसे खरे पंथ'' में एक फरीसी (23:6) के रूप में हुआ।[9]

शाऊल ने अपना बचपन तरसुस में परमेश्वर के वचन का अध्ययन करने[10] और एक व्यवसाय सीखने में बिताया।[11] जब वह छोटा था तो उसे एक प्रतिष्ठित यहूदी शिक्षक गमलीएल[12] की शरण में अध्ययन के लिए यरूशलेम[13] भेज दिया गया। विश्लेषक समझ, जोशीलेपन, और अथक कर्मशक्ति से[14] उसने यहूदी समाज में अपना विशेष स्थान बना लिया था (गलतियों 1:14)। शायद वह महासभा का सदस्य था।[15] था या नहीं, परन्तु

यह निश्चित है कि वह ''यरूशलेम के फरीसियों में सबसे होनहार जवानों में से, यहूदी विश्वास के लिए एक महान नेता बनने के पथ पर अग्रसर था।''

जब वह चालीस वर्ष से कम का था तो[16] उसने अनुभव किया कि उसके प्रिय यहूदी धर्म के पथभ्रष्ट हो जाने का संकट आन पड़ा है।[17] उसके हज़ारों यहूदी साथी मूसा की व्यवस्था में अपने विश्वास से यीशु नामक एक अज्ञात गलीली बढ़ई में विश्वास करने लग पड़े थे। बहुत से याजक भी उसकी बातों में आ गए थे (6:7)। उसे यह बात समझ नहीं आ रही थी कि वह क्रूस पर चढ़े एक अपराधी के पीछे चलने वालों को कैसे समझाए। भला, व्यवस्था नहीं कहती थी कि, ''जो कोई काठ पर लटकाया जाता है, वह श्रापित है''? (देखिए गलतियों 3:13; व्यवस्थाविवरण 21:22, 23)।

उसके सलाहकार गमलीएल ने भीड़ को शांत करने के लिए हिंसा और अनुभवहीन लहर का प्रयोग करने की निन्दा की और सावधानी बरतने को कहा,[18] किन्तु शाऊल का यह स्पष्ट मत था कि यहूदी धर्म और मसीहियत साथ-साथ नहीं रह सकते। यहूदी धर्म को बढ़ाने के लिए मसीहियत का नाश होना आवश्यक था! यरूशलेम में राजनीतिक शक्ति-संरचना के समर्थन से उसने यहूदी धर्म के हृदय को खाने वाली गम्भीर बुराई को निकालने के लिए एक व्यापक अभियान चलाया।[19] बाद में उसने उस धुन के विषय में लिखा जिसने उसे घेरा हुआ था:

> और मैंने पुरुष और स्त्री दोनों को बान्ध-बान्धकर, और बन्दीगृह में डाल डालकर, इस पंथ को यहां तक सताया, कि उन्हें मरवा भी डाला (22:4)।
>
> और जब तेरे गवाह स्तिफनुस का लोहू बहाया जा रहा था, तब मैं भी वहां खड़ा था, और इस बात में सहमत था, और उसके घातकों के कपड़ों की रखवाली करता था (22:20)।
>
> ... और महायाजकों से अधिकार पाकर बहुत से पवित्र लोगों को बन्दीगृह में डाला, और जब वे मार डाले जाते थे, तो मैं भी उनके विरोध में अपनी सम्मति देता था (26:10)।
>
> ... मैं परमेश्वर की कलीसिया को बहुत ही सताता और नाश करता था (गलतियों 1:13)।

केवल प्रभु ही जानता है कि शाऊल के प्रयासों से कितने मसीही शहीद हुए।[20]

जब यीशु के अनुयायी यरूशलेम से भाग गए (8:1), तो शाऊल ने अवश्य ही सोचा होगा कि धर्म त्याग की प्रवृत्ति को कुचल दिया गया है। फिर समाचार मिला कि यीशु के चेले जहां भी जाते, वे अपने विश्वास को फैलाते जा रहे थे (8:4)। यदि किसी में प्रेरणा कम होती तो वह अपनी हार मान चुका होता परन्तु शाऊल ने हार नहीं मानी।

वह तो इन मसीहियों का अन्त करने पर तुला हुआ था! उसे विश्वास था कि इस बार वे नहीं बचेंगे!

शाऊल की नीति कई कानूनी सिद्धांतों पर आधारित थी:[21] (1) यहूदी वैधानिक नियम के अनुसार सारे संसार के यहूदी महायाजक के अधीन थे (इसलिए, महायाजक की चिट्ठी का बहुत प्रभाव था)। (2) रोमी कानून के अधीन मसीही लोग वैधानिक तौर पर यहूदी ही थे अर्थात स्वधर्म त्यागी यहूदी, किन्तु थे वे यहूदी ही[22] (यदि यहूदी अधिकारी यहूदी मसीहियों को अनुशासन में लाने के लिए कुछ करते तो इससे रोमियों को कोई परेशानी नहीं थी)।

महायाजक से (9:2), सभा से (22:5), और अन्य यहूदी अधिकारियों (26:10, 12) से प्राप्त अधिकार पत्र लेकर शाऊल अपने सशस्त्र साथियों के साथ आस-पास के "विदेशी नगरों"[23] की ओर चल दिया। स्थानीय आराधनालय के अधिकारियों की सहायता से, उसने यीशु के अनुयायियों को घेर लिया और उन्हें दण्ड देने के लिए यरूशलेम में ले आया।

अध्याय 9 के आरम्भ में, शाऊल अपनी अब तक की अति उत्साही यात्रा की तैयारी कर रहा था। उसकी यह यात्रा दमिश्क के प्राचीन नगर के लिए थी:

> और शाऊल जो अब तक प्रभु के चेलों को धमकाने और घात करने की धुन में था,[24] महायाजक[25] [और सभा[26]] के पास गया और [उन से[27]] दमिश्क की आराधनालयों के नाम[28] पर इस अभिप्राय की चिट्ठियां मांगी, कि क्या पुरुष, क्या स्त्री, जिन्हें[29] वह इस पंथ[30] पर पाए उन्हें बांध कर [दण्ड देने के लिए बन्दी बनाकर[31]] यरूशलेम में ले आए (9:1, 2)।

दमिश्क यरूशलेम से लगभग 140 मील उत्तर, उत्तर-पश्चिम की ओर सबसे अधिक जनसंख्या वाले केन्द्रों में से एक था।[32] यहां तक पैदल जाने में एक सप्ताह का समय लग जाता था।[33]

टीकाकारों ने शाऊल के मन में जाने के समय स्वतन्त्रतापूर्वक उठती हलचल को भांप लिया,[34] परन्तु हमें सावधान रहना चाहिए। इस उत्साही युवक के मन में रास्ते में बहुत से विचार आते होंगे।[35] स्तिफनुस का सामर्थपूर्ण प्रचार और उसके मरने का ढंग, सताव सहकर भी यीशु के अनुयायियों ने अपने विश्वास को बनाये रखा था, यहां तक कि गमलीएल का तर्क भी, कि यदि मसीहियत परमेश्वर की ओर से नहीं है तो यह स्वयं ही समाप्त हो जाएगी। (मसीहियत ने मिटने का कोई चिह्न नहीं दिखाया!) इसके साथ ही, हमें इस प्रेरित के मनपरिवर्तन से पहले उसके अपने वाक्यों को सम्मान देना चाहिए:

> पौलुस ने महासभा की ओर टकटकी लगाकर देखा, और कहा, हे भाइयो, मैंने आज तक परमेश्वर के लिए बिल्कुल सच्चे विवेक से जीवन बिताया है (23:1)।
>
> ... जिस परमेश्वर की सेवा मैं अपने बापदादों की रीति पर शुद्ध विवेक से करता

हूं (2 तीमुथियुस 1:3)।
मैंने भी समझा था कि यीशु नासरी के नाम के विरोध में मुझे कुछ करना चाहिए (26:9)।

गलतियों 1:15क संकेत देता है कि पौलुस ने बाद में निर्णय लिया कि जो कुछ भी हुआ, उससे उसके मनपरिवर्तन के लिए मार्ग बना, परन्तु उसे मसीह के दर्शन से पूर्व विवेक से पीड़ित के रूप में चित्रित करना अतिश्योक्ति है।[36] शाऊल यात्रा के अन्त में भी वैसे ही पूर्ण विश्वास में अडिग था जैसे कि यात्रा के आरम्भ में। उसका मनपरिवर्तन दोष लगाने वाले विवेक के कारण नहीं बल्कि करुणा से भरे मसीह के कारण था!

अप्रत्याशित सामना (9:3-5; 22:6-8; 26:13-15)

यात्रा के अन्तिम दिन, दोपहर होने वाली थी। दमिश्क की दीवारें दिखाई देने लगी थीं। आमतौर पर यात्री दोपहर की धूप से बचने के लिए आराम करने रुक जाते थे; परन्तु शाऊल ने जो कि अपनी खूनी खोज आरम्भ करने को बेचैन था, अपने साथियों से चलते रहने का आग्रह किया। फिर, अचानक उसकी दुनिया उल्ट-पुल्ट हो गई:

> परन्तु चलते-चलते जब वह दमिश्क के निकट पहुंचा [दोपहर के लगभग[37]], तो एकाएक आकाश से उसके [और उनके जो (उसके) साथ जा रहे थे[38]] चारों ओर [बहुत तेज़[39]] ज्योति चमकी [सूर्य से भी तेज़[40]]। और [वे] भूमि पर गिर पड़े, और [उसने] यह शब्द [इब्रानी भाषा में[41]] सुना, कि हे शाऊल, हे शाऊल,[42] तू मुझे क्यों सताता है? [पैने पर लात मारना तेरे लिए कठिन है।[43]] (9:3, 4)।

चकाचौंध करने वाली रोशनी ने संदेह के लिए कोई स्थान नहीं रहने दिया था। यह दर्शन स्वर्ग से था! शाऊल ने एक मनुष्य को देखा था,[44] परन्तु वह इस मनुष्य को तुरन्त पहचान नहीं सका था। यह कौन था और उसने ऐसा क्यों कहा कि वह उसे सता रहा है? भयभीत शाऊल ने पूछा "हे प्रभु, तू कौन है?" उत्तर मिला: "मैं यीशु [नासरी[45]] हूं जिसे तू सताता है" (9:5)!

कई लोग जो बाइबल के आश्चर्यकर्मों से इन्कार करते हैं, वे यह दावा करते हैं कि शाऊल ने प्रभु को नहीं देखा, बल्कि उसे तो बिजली चमकने के समय मिरगी का दौरा[46] पड़ा था! (यदि ऐसा था, तो हमें प्रार्थना करनी चाहिए कि सभी लोगों को बिजली गिरने से मिरगी के दौरे पड़ें, यदि इस प्रकार का अनुभव उन्हें यीशु के उत्साही सेवक बना सकता है तो!) यह कितना मूर्खता भरा सुझाव है! जो कोई भी पौलुस की पत्रियां पढ़ता है, उसे इस तथ्य से प्रभावित होना चाहिए कि वह एक समझदार व्यक्ति था और किसी कल्पना के वश में नहीं था। वह शारीरिक वेदना और स्वर्गीय यन्त्रणा में अन्तर को समझता होगा! फिर, शाऊल तथा उसके साथ जा रहे सभी लोग भूमि पर गिर पड़े थे। क्या उनको भी एक साथ ही मिरगी के दौरे पड़े थे? और, डॉ. लूका जो कि मिरगी के लक्षणों से परिचित

था, उसने बताया कि वास्तव में क्या हुआ था: *जी उठे प्रभु ने शाऊल को दर्शन दिया* और कहा, ''मैं यीशु हूं; जिसे तू सताता है!''[47]

उन विचारों की कल्पना करें जो उस आश्चर्यजनक घोषणा से शाऊल के मन में आए होंगे। यीशु के अनुयायियों ने घोषणा की थी कि वह मरा नहीं बल्कि जीवित था और वे सही थे! उनका दावा था कि वह ईश्वरीय था और वह था भी! उन्होंने ज़ोर दिया कि वह ही मसीह था, और वह था भी! वे सही थे, और वह गलत था, बिल्कुल गलत! जिस परमेश्वर से वह प्रेम करता था, उसके *लिए* लड़ने के बजाय वह परमेश्वर के *विरुद्ध* लड़ रहा था! यद्यपि शाऊल का अत्याचार यीशु के अनुयायियों के लिए था, परन्तु स्वर्गीय भेंटकर्ता ने यह स्पष्ट कर दिया कि मसीह के चेलों को सताकर वह वास्तव में *उसे ही* सता रहा था![48] मसीहियों को गिरफ्तार करके उसने यीशु को ही गिरफ्तार किया! मसीहियों को सताकर उसने मसीह को ही सताया! मसीहियों की हत्या करके उसने परमेश्वर के पुत्रों की ही हत्या की थी![49]

वह ''व्यवस्था की धार्मिकता के विषय में'' स्वयं के निर्दोष होने पर गर्व करता था (फिलिप्पियों 3:6); अब उसने अनुभव किया कि वह तो पापियों में ''सबसे बड़ा'' था (1 तीमुथियुस 1:15)! कांपते हुए उसने पूछा, ''हे प्रभु मैं क्या करूं?'' (22:10)। क्या उसके लिए कोई आशा थी?

असाधारण चुनौती (9:6-9; 22:9-11; 26:16-18)

प्रभु के दर्शन की तरह ही उसका उत्तर भी चौंकाने वाला था। यीशु ने शाऊल को भूमि पर झुकने से मना किया:

> परन्तु तू उठ, अपने पांवों पर खड़ा हो; क्योंकि मैंने तुझे इसलिए दर्शन दिया है, कि तुझे उन बातों का भी सेवक और गवाह ठहराऊं,[50] जो तूने देखी हैं,[51] और उनका भी जिनके लिए मैं तुझे दर्शन दूंगा।[52] और मैं तुझे तेरे लोगों से और अन्य जातियों से बचाता रहूंगा,[53] जिनके पास मैं अब तुझे इसलिए भेजता हूं कि तू उनकी आंखें खोले, कि वे अन्धकार से ज्योति की ओर, और शैतान के अधिकार से परमेश्वर की ओर फिरें; कि पापों की क्षमा, और उन लोगों के साथ जो मुझ पर विश्वास करने से पवित्र किए गए हैं, मीरास पाएं। (26:16-18)।[54]

इससे बढ़कर चुनौती कभी नहीं दी गई! विद्वान प्रश्न करते हैं कि यीशु ने शाऊल को दर्शन क्यों दिया, पर प्रभु ने स्वयं उसे इसका कारण बताया। उसने शाऊल से कहा, ''मैंने तुझे *'इसलिए'* दर्शन दिया है'' (आयत 16)। उस उद्देश्य को तीन भागों में बांटा जा सकता है।

पहला, यीशु ने शाऊल को गवाह ठहराने के लिए दर्शन दिया ''कि तुझे उन बातों का भी सेवक और गवाह ठहराऊं'' (आयत 16)। प्रेरित होने की योग्यताओं में से एक जी

उठने का गवाह होना भी थी (1:21, 22)। बाद में, जब पौलुस ने मसीह के जी उठने के दर्शनों की जानकारी दी तो उसने कहा, ''और सब के बाद मुझ को भी दिखाई दिया, जो मानो अधूरे दिनों का जन्मा हूं। क्योंकि मैं प्रेरितों में सबसे छोटा हूं'' (1 कुरिन्थियों 15:8, 9)। उसने इसी कलीसिया को लिखा ''क्या मैं प्रेरित नहीं? क्या मैंने यीशु को जो हमारा प्रभु है, नहीं देखा?'' (1 कुरिन्थियों 9:1)।

दूसरा, यीशु ने शाऊल को *अन्यजातियों में* गवाह ठहराने के लिए दर्शन दिया और कहा, ''अन्यजातियां ... जिनके पास मैं अब तुझे ... भेजता हूं'' (26:17)। पौलुस को ''जगत का प्रेरित'' कहा गया है, परन्तु उसकी *विशेष* सेवकाई अन्यजातियों के लिए ही थी। यह पहला अवसर था जब स्पष्ट रूप से कहा गया था कि *अन्यजातियों* को भी प्रभु की विशेष योजना में शामिल किया गया है। आप और मैं जानते हैं कि ''... पृथ्वी की छोर तक ... गवाह ...'' (1:8) होने की यीशु की चुनौती में अन्यजातियां भी शामिल थीं। पतरस के कथन कि ''यह प्रतिज्ञा ... उन सब दूर-दूर के लोगों के लिए भी है'' (2:39) में अन्यजातियां भी थीं। इब्राहीम को दी गई प्रतिज्ञा, जिसे पतरस ने प्रेरितों 3:25 में उद्धृत किया, में अन्यजातियां भी थीं: ''तेरे वंश के द्वारा पृथ्वी के सारे घराने आशीष पाएंगे।'' तथापि, जब तक प्रभु ने शाऊल को दर्शन नहीं दिया, अन्यजातियों का विशेष रूप से उल्लेख नहीं हुआ। हम में से जो गैर-यहूदी अर्थात अन्यजातियों में से हैं, के लिए यह पल जश्न मनाने का है!

तीसरा, यीशु ने शाऊल को अन्यजातियों के लिए गवाह ठहराने के लिए दर्शन दिया, ताकि वह *''उनकी आंखें खोले''* (26:18)। आत्मा को जीतने के लिए पवित्र शास्त्र में दिए गए महानतम कथनों में से आयत 18 एक है। रूह को जीतने वाले होने के कारण, हमारा कार्य पांच गुणा है: ''[1] [पापियों की] आंखें खोले, [2] कि वे अन्धकार से ज्योति की ओर, [3] और शैतान के अधिकार से परमेश्वर की ओर फिरें; [4] कि पापों की क्षमा, [5] और उन लोगों के साथ जो मुझ [यीशु] पर विश्वास करने से पवित्र किए गए हैं, मीरास पाएं'' (26:18)।

शाऊल को दर्शन देने का यीशु का उद्देश्य उसे अन्यजातियों के लिए प्रेरित होने के योग्य बनाना था! हां, यीशु के दर्शन से शाऊल के मन में विश्वास उत्पन्न हो गया और उससे उसके मनपरिवर्तन की प्रक्रिया का आरम्भ हुआ,[55] परन्तु यीशु ने कहा कि शाऊल को दर्शन देने का उसका उद्देश्य शाऊल का उद्धार नहीं था, बल्कि उसे अन्यजातियों में गवाह बनाकर भेजना था। शाऊल (पौलुस) ने बाद में रोमियों 11:13 में लिखा, ''मैं *अन्यजातियों के लिए* प्रेरित हूं'' (गलतियों 2:6-9 भी देखिए)।

क्या यीशु द्वारा दर्शन देने के समय शाऊल यह सब समझता था? मुझे इसमें संदेह है। उसके मन में प्रमुख तथ्य यह था कि यीशु ही वास्तव में मसीह था और उसने परमेश्वर के पुत्र का ही विरोध किया था! ''मैं क्या करूं?'' प्रश्न उसके लिए सबसे बड़ी चिंता थी। यीशु ने निष्कर्ष के तौर पर कहा, ''परन्तु अब उठकर नगर में जा, और जो तुझे करना[56] है, वह तुझ से कहा जाएगा'' (9:6)।

इतना सब कुछ होने के बाद, ''जो मनुष्य उसके [शाऊल के] साथ थे, वे चुपचाप रह गए; क्योंकि शब्द तो सुनते थे, परन्तु किसी को देखते नहीं थे''[57] (9:7)। उन्होंने ''ज्योति तो देखी, परन्तु जो ... बोलता था उसका शब्द न सुना'' (22:9)।[58] ये लोग इस बात के महत्वपूर्ण गवाह थे कि मार्ग में सचमुच कुछ असामान्य घटा।

फिर ''शाऊल भूमि पर से उठा, परन्तु जब आंखें खोलीं तो उसे [उस ज्योति की चमक के कारण[59]] कुछ दिखाई न दिया और वे (उसके सहयात्री) उसका हाथ पकड़कर दमिश्क में ले गए'' (9:8)। शाऊल को आशा थी कि वह दमिश्क में बदला लेने वाले परमेश्वर के सेवक के रूप में पूरी सामर्थ के साथ सफाई कर देगा; परन्तु शहर में एक शोकित पापी की तरह उसे ले जाया गया, जो एक अन्धे भिखारी की तरह असहाय था।

लड़खड़ाते शाऊल को दमिश्क की प्रमुख गलियों में से एक, सीधी नाम की गली तक ले जाया गया,[60] वहां से वह टोली यहूदा नामक एक आदमी के घर में गई।[61] उसे अतिथि-गृह तक ले जाकर अकेला छोड़ दिया गया। उसकी आंखों से आंसू टपक रहे थे,[62] जब वह घुटनों के बल गिरकर प्रार्थना करने लगा।[63] ''और वह तीन दिन तक[64] न देख सका, और न [उसने] खाया और न पीया'' (9:9)।[65]

यह दृश्य पश्चात्ताप में डूबे हुए एक व्यक्ति का है। शाऊल को अब मसीह में विश्वास हो गया था, उसने पश्चात्ताप किया और यीशु को ''प्रभु''[66] के रूप में स्वीकार कर लिया था, परन्तु उसके पाप का दोष अभी भी उसके प्राण को खा रहा था। उसने *दर्शन* तो पाया था, परन्तु अभी भी उसे आवश्यकता थी कि कोई *आकर* उसे बताए[67] कि वह ''क्या *करे*'' (9:6)।

सारांश

यह देखने के लिए कि कोई आया और उसने क्या निर्देश दिया, हमें अगले पाठ तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। इस पाठ में हम देख चुके हैं (1) अडिग विश्वास (शाऊल का पूर्ण विश्वास यह था कि उसे मसीहियत का नाश कर देना चाहिए), (2) एक अप्रत्याशित सामना (जब यीशु ने मार्ग पर उसे दर्शन दिया), और (3) एक असाधारण चुनौती (जब यीशु ने उसे अन्यजातियों में सुसमाचार ले जाने की चुनौती दी)। आगे, हम देखेंगे (4) एक निरुत्साही मसीही (हनन्याह, जो शाऊल के पास जाने से घबराता था) की (5) बेझिझक परिवर्तित (शाऊल, जिसने उसी समय आज्ञा का पालन किया जब उसे बताया गया कि उसे क्या करना है) के साथ तुलना। हम (6) उस परिवर्तित के (मसीह के काम के लिए) न खत्म होने वाले समर्पण की भी बात करेंगे।

पाठ को समाप्त करते हुए, इस तथ्य पर विचार करें कि हो सकता है आप भी अपने आत्मिक ''दमिश्क के मार्ग'' पर चल रहे हों। प्रभु आपको अन्धा करने वाली ज्योति में दर्शन नहीं देगा, परन्तु किसी भी ईमानदार हृदय में विश्वास उत्पन्न करने के लिए परमेश्वर के वचन की ज्योति पर्याप्त है (यूहन्ना 20:30, 31)। यदि आप परमेश्वर के सुसमाचार की

बुलाहट का विरोध कर रहे हैं, तो निश्चित ही ''तेरे लिए पैने पर लात मारना कठिन है।'' आपके लिए यह मानना कठिन हो सकता है कि आप गलत हैं; हो सकता है कि आपको बहुत कुछ छोड़ना पड़े, जैसे शाऊल को छोड़ना पड़ा था। मैं आपसे निवेदन करता हूं कि और विरोध न करें, बल्कि जैसे शाऊल ने समर्पण किया, वैसे ही आप भी कर दें! आपका ''दमिश्क का मार्ग'' *आपकी* ''शिष्यता का मार्ग'' बन सकता है!

विजुअल-एड नोट्स

जब मैं एक जवान प्रचारक था, तब मैंने ''पापी शाऊल से प्रचारक शाऊल तक'' पर एक प्रवचन तैयार किया था। प्रचार करने से पहले, मैं नीचे दिया गया रेखाचित्र बोर्ड पर लगा देता था। प्रस्तुति के दौरान, मैं बाईं ओर नीचे से लेकर ऊपर दायें कोने तक ले जाता। यह आसान था, और प्रभावकारी भी।

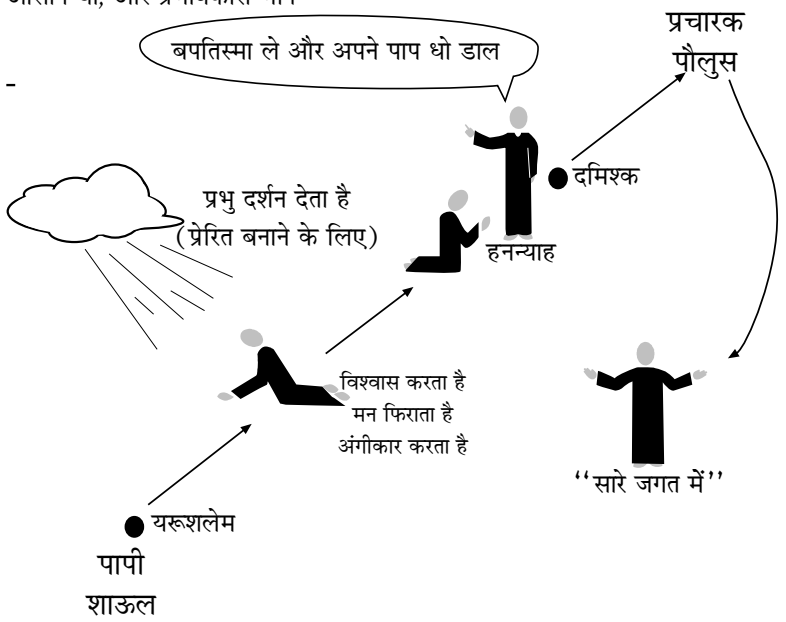

प्रवचन नोट्स

''द चान्स ऑफ़ ए लाइफ़ टाइम,'' के शीर्षक से रिक ऐचले ने शाऊल के मनपरिवर्तन पर एक प्रवचन दिया। उसने शाऊल के मनपरिवर्तन में तीन स्थितियों पर ध्यान दिया: (1) पाप का अहसास, (2) यीशु की पहचान, (3) आज्ञा मानने का संकल्प। इसका

एक वैकल्पिक शीर्षक हो सकता है ''शिष्यता के मार्ग पर।''

प्रवचन ''अन्धा होने के समय जो कुछ पौलुस ने देखा'' शाऊल के मनपरिवर्तन को अलग ढंग से दिखा सकता है। यह प्रवचन द प्रीचर'ज़ पीरियोडिकल (अब *ट्रुथ फ़ॉर टुडे*) जुलाई 1983 के अंग्रेजी संस्करण में छपा।

बहुत से प्रचारकों ने शाऊल के मनपरिवर्तन की कहानी में मिलने वाले चार प्रश्नों का प्रचार किया है (प्रेरितों 9:4, 5; 22:10, 16)। पॉल रोजर्स ने इन चार प्रश्नों पर, ''द ग्रेटैस्ट क्वैश्चन ऑफ़ द एजस-ऑल ऑन वन पेज (युगों के महानतम प्रश्न-सभी एक पृष्ठ पर)'' शीर्षक से प्रवचन दिया है (द प्रीचर'ज़ पीरियोडिकल, मई 1985)।

इस पाठ के आरम्भ से पौलुस के जीवन चरित्र से जानकारी लेकर और फिर उसकी सेवकाई को संक्षिप्त रूप से जोड़कर प्रेरित के जीवन पर एक प्रवचन दिया जा सकता है। मैंने चार मुख्य बातों के साथ: (1) अपने मनपरिवर्तन में एक विजयी से बढ़कर, (2) एक मसीही के रूप में विजयी से बढ़कर, (3) एक प्रचारक के रूप में विजयी से बढ़कर, (4) एक कैदी के रूप में विजयी से बढ़कर, ''जयवन्त से बढ़कर'' (रोमियों 8:37) के शीर्षक से ऐसा ही प्रवचन दिया। हर खण्ड में, मैंने ध्यान दिया कि *मसीह के द्वारा* पौलुस ने अपने जीवन में उस समय पाई जाने वाली उन बाधाओं का, जो हमारे सामने भी आती हैं ''जयवन्त से बढ़कर'' सामना किया।

आत्माओं को जीतने वाले के रूप में जो कुछ हमें पाना है *और* मसीह में परिवर्तित होने पर किसी व्यक्ति के साथ क्या होता है, के बारे में पांच बिन्दुओं का एक रचनात्मक प्रवचन तैयार करने के लिए प्रेरितों 26:18 का इस्तेमाल किया जा सकता है।

पादटिप्पणियां

[1]बाद में शाऊल को पौलुस के नाम से जाना जाने लगा था (प्रेरितों 13:9 और उसके बाद)। इस प्रेरित के बारे में बात करते समय इस पाठ और अगले तीन पाठों में ''शाऊल'' और ''पौलुस'' का इस्तेमाल किया गया है। [2]तीन बार बताना इस घटना के महत्व को प्रमाणित करता है। [3]लूका अपनी ही नकल नहीं करता था। बाद में पौलुस के प्रवचनों को लिखने की योजना के कारण, लूका ने अध्याय 9 में विस्तार को छोड़ दिया, जो उसने बाद में देना था। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि इन वृत्तांतों में मामूली सा अन्तर अलग-अलग श्रोताओं के लिए अलग-अलग तथ्यों पर बल दिए जाने के कारण है। तीनों वृत्तांत एक दूसरे के प्रतिकूल नहीं बल्कि पूरक हैं। [4]स्रोतों को दर्शाने के लिए मैं मुख्यत: अध्याय 9 के वृत्तांत का प्रयोग करूंगा और कोष्ठकों के साथ पादटिप्पणियों के द्वारा अध्याय 22 और 26 में से अतिरिक्त जानकारी दूंगा। शास्त्र के पद में, जब शब्द और पादटिप्पणी के हवाले बिना कोष्ठकों अथवा बरैकटों में मिलें, तो समझ लें कि ये शब्द *मैंने* जोड़े हैं। अधिकतर, अध्याय 22 और 26 के उत्तम पुरुष को अध्याय 9 के अन्य पुरुष में बदलना आवश्यक था। [5]प्रेरितों 11:26 तक यीशु के अनुयायियों को ''मसीही'' नहीं कहा गया (''प्रेरितों के काम, भाग-3'' में उस आयत पर नोट्स देखें), परन्तु मैं कभी-कभी, पूर्वानुमान से, इस पाठ में उस शब्द का प्रयोग विभिन्नता के लिए ऐसे करूंगा जैसे मैं प्रभु के चेलों की बात कर रहा हूं। [6]प्रेरितों 21:39; 22:3. तरसुस व्यापार तथा शिक्षा का भी एक प्रमुख केन्द्र था। पृष्ठ 126 पर मानचित्र देखिए। [7]शाऊल का अर्थ है ''परमेश्वर का बुलाया हुआ।'' [8]सम्पत्ति में अनेक तथ्य निहित हैं, जिनमें शामिल है: (1) पौलुस

''बढ़ना भी जानता'' था (फिलिप्पियों 4:12)। क्योंकि मसीही बनने के बाद उसने धनी जीवन व्यतीत नहीं किया, यह सम्भवत: उसके आरम्भिक जीवन की ओर संकेत है। (2) उसके माता-पिता उसे छात्र के रूप में यरूशलेम भेजने का खर्चा वहन कर सकते थे। (देखिए 16:37; 22:25-29.) हम नहीं जानते कि पौलुस के परिवार ने रोमी नागरिकों का दर्जा कैसे प्राप्त किया। हो सकता है कि उनके किसी पूर्वज ने रोमी सरकार के लिए कोई विशेष सेवा की हो। [9]प्रेरितों 26:5. ''प्रेरितों के काम, भाग-1'' की शब्दावली में देखिए ''फरीसी।'' [10]पौलुस के लेखों और संदेशों में पुराने नियम की लगभग हर पुस्तक से, शास्त्र के दो सौ से अधिक उद्धरण मिलते हैं।

[11]आर्थिक स्थिति कैसी भी हो, हर यहूदी लड़के को कोई दस्तकारी सिखाई जाती थी। यहूदियों का विश्वास था कि एक लड़के को काम सिखाने में असफलता उसे चोरी करना सिखाना है। शाऊल को तम्बू बनाने का काम सिखाया गया था (18:3)। [12]22:3. गमलीएल के सम्बन्ध में, ''प्रेरितों के काम, भाग-1'' में 5:34 पर नोट्स देखिए। [13]उसने कहा कि ''वह आरम्भ से'' यरूशलेम में रहा (26:4), और उसने वहीं ''पढ़ाई की'' (22:3)। शायद उसे तेरह वर्ष की आयु में यरूशलेम भेजा गया, वहां उसे ''एक कमांडैन्ट का पुत्र'' (बार मित्ज़्वाह) माना जाता था। कइयों के विचार में 23:16 संकेत देता है कि पौलुस की एक बहन वहां थी, जिसके साथ वह अपने छात्रकाल के दौरान रहता था, परन्तु 21:15,16 सम्भवत: यह संकेत देता है कि उसकी बहन यरूशलेम में नहीं रहती थी। [14]प्रेरितों 22:3 दूसरे गुण की बात करता है (फिलिप्पियों 3:6 भी देखिए)। दूसरे और तीसरे का अनुमान उसके जीवन और पत्रियों से लगाया जाता है। [15]हम यह नहीं जानते कि वह महासभा का सदस्य था या नहीं, परन्तु इन शब्दों ''मैं भी उन के विरोध में अपनी सम्मति देता था'' की अति स्वाभाविक व्याख्या यही होगी (प्रेरितों 26:10)। कई यह कहकर आपत्ति करते हैं कि महासभा के सदस्य विवाहित होते थे, किन्तु पौलुस विवाहित नहीं था (1 कुरिन्थियों 7:8)। परन्तु, हो सकता है कि उसकी पत्नी मर गई हो (1 कुरिन्थियों 7:8), या हो सकता है कि जब वह मसीही बना तो वह उसे छोड़ गई हो (फिलिप्पियों 3:8; 1 कुरिन्थियों 7:10, 11)। शाऊल की छोटी आयु सहित कई अन्य आपत्तियां भी दर्ज हुई हैं। यह एक ऐसा प्रश्न है जो शायद कभी हल न हो। [16]इस भाग में 7:58 पर नोट्स देखिए। [17]स्पष्टत: पौलुस यीशु के पृथ्वी पर रहते समय कभी उससे नहीं मिला, इसलिए ऐसा लगता है कि पौलुस यीशु की व्यक्तिगत सेवकाई के समय तीन या चार वर्षों तक देश से बाहर रहा था (शायद तरसुस में), और फिर जब मसीहियत बढ़ने लगी तो वह यरूशलेम लौट आया (यह भी सम्भव है कि उसे सभा द्वारा *वापिस बुलाया गया* हो)। [18]''प्रेरितों के काम, भाग-1'' में 5:34-40 पर नोट्स देखिए। [19]इस सताव के संक्षिप्त विवरण के लिए इस भाग में 8:1-4 पर नोट्स देखिए। [20]रोमी कानून मुख्यत: महासभा को मृत्यु-दण्ड देने की मनाही करता था (इस भाग में स्तिफनुस की मृत्यु पर नोट्स देखिए), कइयों का विचार है कि पौलुस अत्युक्ति का प्रयोग कर रहा था और यहूदी अधिकारियों द्वारा वास्तव में केवल स्तिफनुस ही मारा गया था। तथापि, जिस सभा ने रोमी कानून के विपरीत एक मसीही को मारा था, वह एक सौ मसीहियों को भी मार सकती थी। यदि पौलुस के शब्दों को यहां स्वाभाविक अर्थ दिया जाए, तो वह वास्तव में ''एक सामूहिक हत्यारा'' था।

[21]दूसरे कानूनी सिद्धांत भी शामिल हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, रोमी कानून महासभा को भगौड़ों को न्याय से यरूशलेम में वापस लाने की अनुमति देता था। [22]अगले एक भाग में 18:15 और 25:19 पर नोट्स देखिए। [23]प्रेरितों 26:11. लूका ने यह नहीं लिखा कि दमिश्क रवाना होने से पहले पौलुस किन नगरों में गया, परन्तु यहूदिया के उत्तर, पूर्व, और दक्षिण में बहुत से ''विदेशी नगर'' थे। [24]''घात'' शब्द इस तथ्य पर ज़ोर देता है कि शाऊल स्तिफनुस की मृत्यु के बाद रुका नहीं। ''घात करने की धुन'' वाले आदमी के लिए 140 मील की यात्रा थकाने वाली नहीं थी। [25]काइफ़ा। [26]प्रेरितों 22:5. [27]प्रेरितों 22:5. [28]जोसेफस के अनुसार दमिश्क में यहूदियों की काफी जनसंख्या और बहुत से आराधनालय थे। [29]कई लोगों का अनुमान है कि रोमी कानून के अधीन, शाऊल को केवल उन मसीहियों को वापस लाने का अधिकार था जो यरूशलेम से भाग गए थे, परन्तु प्रयुक्त शब्द संकेत देते हैं कि उसने ''किसी भी'' और ''सभी'' मसीहियों को जो उसे मिले, यरूशलेम वापस लाने की योजना बनाई थी (आयत 14)। यद्यपि हनन्याह जो यरूशलेम से *नहीं* भागा था, उसके आने से घबराया हुआ था। [30]मसीहियत के लिए लूका द्वारा इस शब्द का

इस्तेमाल पहली बार यहां किया गया। उसके पसन्दीदा शब्द का हिन्दी अनुवाद कहीं पर मार्ग व कहीं पर पंथ के रूप में हुआ है (प्रेरितों 19:9, 23; 22:4; 24:22)। मसीहियत को ''उद्धार का मार्ग'' (16:17) और ''प्रभु/परमेश्वर का मार्ग'' (प्रेरितों 18:25, 26) कहा गया है और यह यूहन्ना 14:6 में दिए गए यीशु के शब्दों को याद करवाता है।

[31]प्रेरितों 22:5. [32]पृष्ठ 126 पर मानचित्र देखें। [33]शास्त्र में बाद में कहा गया है कि शाऊल के साथी *उसका हाथ पकड़कर* दमिश्क में *ले गए* (9:8)। यह भाषा उनके घोड़ों या रथों पर सवारी से अधिक पैदल जाने के बारे में बताती है। [34]शाऊल एक फरीसी था, इसलिए हो सकता है कि उसने अपने साथ जाने वालों से स्वयं को अलग रखा हो, जिससे उसे आत्म निरीक्षण का और समय मिल गया होगा। ''प्रेरितों के काम, भाग-1'' की शब्दावली में देखिए ''फरीसी।'' [35]यरूशलेम से दमिश्क के लिए एक रास्ता गलील से होकर जाता था। यदि शाऊल इस रास्ते से गया, तो उसने यहां यीशु के प्रसिद्ध काम के बहुत से प्रमाण देखे (और सुने) होंगे। [36]बहुत से लोग जो शाऊल की अन्दरूनी हलचल की वकालत करते हैं, वे ऐसा उसके मनपरिवर्तन के लिए स्वाभाविक व्याख्या को बढ़ावा देने के लिए करते हैं। वे शाऊल को इतना दोषी दिखाते हैं कि वह ईश्वरीय चिह्न के रूप में *कुछ भी* (बिजली की गरज) मानने करने को तैयार था! [37]प्रेरितों 22:6. [38]प्रेरितों 26:13. [39]प्रेरितों 22:6. [40]प्रेरितों 26:13.

[41]26:14. ''इब्रानी भाषा'' अरामी भाषा की ओर संकेत है। यूनानी शास्त्र में ''शाऊल'' का अरामी स्पैलिंग यूनानी के बजाय यीशु के शब्दों में इस्तेमाल किया गया है। शाऊल के मनपरिवर्तन की कहानी में और कहीं, ''शाऊल'' के यूनानी स्पैलिंग का प्रयोग किया गया है। [42]लूका के लेखों में, जहां भी प्रभु ने जिसका एक नाम दो बार पुकारा, वह व्यक्ति मुश्किल में था! देखिए लूका 10:41; 13:34; 22:31. [43]प्रेरितों 26:14. पैना एक लम्बी, तीखी की हुई लकड़ी (कई बार उसके सिरे पर लोहा लगा होता था) होती थी जो जानवरों को हांकने के लिए इस्तेमाल की जाती थी। अड़ियल जानवरों को हांकने के समय वे पीछे की ओर दुलत्ती मारते जिससे उन्हें ही कष्ट होता। शाऊल के जीवन में जो कुछ हो रहा था वह उसे मसीही बनने के लिए प्रभु का ''हांकना'' ही था, परन्तु अभी तक, शाऊल ने विरोध ही किया था जिससे उसकी अपनी ही हानि थी। ऐसा करते रहने से उसे *अनन्त* हानि की पीड़ा झेलनी पड़नी थी। [44]आगे की आयत केवल यह उल्लेख करती है कि शाऊल ने यीशु को *सुना,* परन्तु बाद के पद कहते हैं कि शाऊल ने यीशु को *देखा* भी (9:17, 27; 1 कुरिन्थियों 9:1; इत्यादि)। [45]प्रेरितों 22:8. [46]कइयों का मानना है कि पौलुस के ''शरीर में एक कांटा'' (2 कुरिन्थियों 12:7-10) मिरगी थी। हम निश्चित तौर पर नहीं जान सकते कि दुख क्या था। [47]शाऊल में आने वाला नाटकीय परिवर्तन इसका प्रमाण है कि उसने जी उठे प्रभु को देखा। [48]यीशु के शब्दों और थियोलॉजिकल प्रासंगिकताओं के लिए, पहली मुख्य विशेषता, ''मसीह में बालकों के लिए प्रौढ़ परामर्श'' देखिए। [49]कलीसिया के सदस्यों के लिए निजी तौर पर लागू हो सकता है: जब हम मसीह में अपने भाइयों और बहनों से दुर्व्यवहार करते हैं, तो हम मसीह के साथ दुर्व्यवहार कर रहे होते हैं! [50]यही चुनौती 1:8 में प्रेरितों को दी गई थी।

[51]यह मार्ग में शाऊल को यीशु के दर्शन का हवाला है। [52]यीशु ने पौलुस को और दर्शन दिए (18:9,10; 22:17-21; 23:11; 2 कुरिन्थियों 12:1-4, 7 भी देखिए)। [53]नि:संदेह ईश्वरीय रक्षा की इस प्रतिज्ञा ने सुसमाचार को फैलाने के लिए शाऊल के साहस में आश्चर्यजनक ढंग से योगदान दिया। [54]कई लोगों का विश्वास है कि 26:16-18 उस *सबका* संक्षिप्त विवरण है जो यीशु ने निजी तौर पर और हनन्याह के द्वारा शाऊल से कहा। तथापि, अग्रिप्पा को पौलुस के प्रवचन से संकेत मिलता है कि यीशु ने यह सब उसे तब कहा जब उसने मार्ग में उसे दर्शन दिया, इसलिए मैं इसे पाठ में यहां पर शामिल कर रहा हूं। [55]ऐसा लगता नहीं था कि कोई मसीही शाऊल के पास जाकर उसे वचन सुनाए (बाद में हनन्याह की प्रतिक्रिया देखें)। [56]''करूं'' एक कठोर शब्द है। जो कुछ शाऊल को करने के लिए बताया गया होगा, वह उसकी इच्छाधीन नहीं था। [57]जी उठे यीशु का दर्शन केवल शाऊल के लिए था (1 कुरिन्थियों 15:8)। [58]आलोचकों ने शाऊल के साथ जाने वालों के विरोधों को खोजने की कोशिशें की हैं: ''वे गिरे, परन्तु खड़े थे; उन्होंने सुना, परन्तु उन्हें सुनाई नहीं दिया।'' पहले वाले के सम्बन्ध में या तो वे गिरे और फिर खड़े हो गए, या ''अवाक् खड़े

रहे'' अलंकार की भाषा है। दूसरे के सम्बन्ध में, NASB में सम्भवत: सही विचार है। उन्हें एक आवाज़ *सुनाई* दी, परन्तु वे उस आवाज़ की बात *समझ* नहीं सके (इसी प्रकार की एक घटना के लिए, देखिए यूहन्ना 12:29)। यह भी सम्भव है कि जो ''आवाज़'' उन लोगों ने सुनी वह *शाऊल की* आवाज़ थी (9:7), किन्तु उन्होंने *यीशु की* आवाज़ नहीं सुनी (22:9)। [59]प्रेरितों 22:11. [60]वह गली आज भी दमिश्क में है। यह लगभग एक मील लम्बी है और इसके केवल पांच छोटे-छोटे मोड़ हैं (प्राचीन नगर की बहुत सी टेढ़ी-मेढ़ी गलियों की तुलना में)।

[61]यह सम्भवत: वह घर था जहां पर मसीहियों को ढूंढते समय शाऊल ने अपना मुख्यालय बनाने की योजना बनाई थी। [62]आंसू बहे हो सकते हैं। [63]प्रेरितों 9:11. उसकी प्रार्थना उस चुंगी लेने वाले की प्रार्थना के जैसी ही होगी: ''हे परमेश्वर मुझ पापी पर दया कर!'' (लूका 18:13)। [64]यदि समय की यहूदी गणना इस्तेमाल की गई, तो पहला दिन वह था जब प्रभु ने शाऊल को दर्शन दिया था, दूसरा दर्शन के बाद का दिन था, और तीसरा दिन उससे अगला था, जिस दिन हनन्याह शाऊल के पास आया। [65]कइयों का सुझाव है कि शाऊल ने इसलिए नहीं खाया-पीया क्योंकि उसे अकेला छोड़ दिया था और कोई उसके लिए भोजन-पानी नहीं लाया था। ऐसा लगता नहीं है। उसने सम्भवत: पश्चात्ताप के चिह्न के रूप में उपवास रखा होगा (तु. योना 3:7) या इसलिए क्योंकि वह परेशान था और कुछ खाने की उसकी इच्छा नहीं थी। [66]पहली बार शाऊल ने यीशु को ''प्रभु'' (9:5; 22:8) कहकर सम्बोधित किया, शायद यह सम्मानपूर्वक दिया गया एक पद था, क्योंकि वह नहीं जानता था कि वह कौन है। तथापि, दूसरी बार (22:10), उसे पता था कि उसके साथ किसने बात की है और उसने यीशु को ''प्रभु'' अंगीकार किया। [67]इस बात पर ज़ोर दिया जाना चाहिए कि परमेश्वर की योजना मनुष्यों द्वारा मनुष्यों को बताने की थी कि उद्धार पाने के लिए वे क्या करें (यही कारण है कि यीशु ने शाऊल को नहीं बताया कि वह क्या करे)। इस तथ्य का खोजे के मनपरिवर्तन में *उल्लेख* किया गया था और कुरनेलियुस के मनपरिवर्तन में इस पर ज़ोर दिया जाएगा।